लंदन
जून १५, २०००

सन्देश संख्या २४

आप वह नहीं हैं जो आप सोचते हैं

आप अपनी चित्तवृत्ति यानी कि खण्ड चैतन्य नहीं हैं । वास्तव में आप कुछ भी नहीं हैं । आप दूरदर्शन (टीवी) के उस कोरे पर्दे की तरह हैं जो उस पर दिखने वाले चित्रों से स्वयं किसी भी प्रकार से प्रभावित नही होता है। जब टी०वी० के पर्दे पर आग का दृश्य दिखाई पड़ता है तब क्या वह पर्दा जलता है? जब उस पर समुद्र या वर्षा का दृश्य दिखाई देता है तब क्या वह भीगता है? क्या युद्ध के दृश्यों में चलने वाली गोलियों और बमों से वह पर्दा न होता है?

आप शून्य हैं, समग्र अस्तित्व हैं, ऊर्जा हैं, पूर्ण चैतन्य हैं। आप शून्यता का अनुभव नहीं कर पाते हालाँकि यही आपका वास्तविक स्वरूप एवं विस्तार है। अस्तित्व यथार्थ है न कि अनुभव । ऐसा होने के लिए अहम् भाव, जो कि अनुभव की गठरी मात्र है, का विलय होना आवश्यक है। बुद्धि का द्वार खुलना चाहिए ताकि इसमें चैतन्य का प्रवेश हो सके। जिस प्रकार हम सभी एक ही वायु मण्डल से श्वास लेते हैं उसी प्रकार पूर्ण चैतन्य से ही हम सब का खण्ड चैतन्य संचालित होता है । चैतन्य ही ध्यान है।

खण्ड चैतन्य के कई घटक हैं, जैसे – आशंका, चिन्ता, अपराधबोध, अंध विश्वास, लोभ, आकांक्षा, आपाधापी, भ्रमजाल, छवि, प्रभाव, अतिभोग, अवरोधन, मानसिक तलछट, मान्यता, धर्मान्धता, अनुबंधन (कन्डीशनिंग), विभ्रान्ति तथा मन के ऐसे अन्य अवयव। किन्तु आप वास्तव में अपना मन नहीं हैं। मन तो काल्पनिक है। यह सत्य नहीं है, किन्तु मान्य है। यह आपके दिन प्रति दिन के व्यावहारिक जीवन के कारोबार में उपयोगी है। आप वह नही हैं जो आप सोचते हैं। वस्तुतः आप वह हैं जो सोच–विचार के जंजाल से परे हैं। आप कुछ भी नहीं हैं। जब इस शून्यता का आविर्भाव हो तथा इसका सामना करने का साहस उत्पन्न हो तभी समझना चाहिए कि मानव देह एवम् उसके अन्दर के खण्ड चैतन्य में मौलिक रूपान्तरण की शुरूआत हो रही है। शरीर की तन्मात्रायें इन्द्रियों का सृजन करती हैं। मन, जो कि माया है, देह के मृत होते ही लुप्त हो जाता है।

गाँव के मेले में भाग लेने आई नाटक कम्पनी अपना तम्बू लगाती है, मंच बनाती है तथा अभिनय के मध्य विश्राम हेतु एक नेपथ्यशाला स्थापित करती है। अभिनेता अपनी भूमिका पूरी निष्ठा के साथ निभाते हैं तथा इसके लिए दर्शकों की खूब प्रशंसा भी प्राप्त करते हैं परन्तु वे अपनी भूमिकाओं से मानसिक रूप से बँधते नहीं हैं। एक दृश्य की समाप्ति पर जब वे विश्राम या अगले दृश्य की तैयारी हेतु नेपथ्यशाला में आते हैं तब वे पूर्व की भूमिका के अनुरूप राजा, रानी सेनानायक अथवा खलनायक या वैसा कुछ भी नहीं रहते। वे केवल वही रह जाते हैं जो मंच पर जाने से पूर्व थे और जब मेला समाप्त हो जाता है तब कम्पनी अपने लाव–लश्कर समेट कर उस गाँव को छोड़कर अन्यत्र के लिए प्रस्थान कर जाती है।

जब तक कि इस नाटक की निःसारता एवं निरर्थकता का पूर्ण बोध (जीवन–मुक्ति) न हो जाय तब तक शून्य नेपथ्यशाला है, मन रंगमंच है और शरीर की मृत्यु दूसरे गाँव के मेले में खेले जाने वाले नाटक में भाग लेने के लिए वर्तमान शिविर का समापन है।

नेपथ्यशाला ब्रह्म है,

रंगमंच (एवं नाटक) विष्णु है,

शिविर के समापन पर रिक्त स्थान ही शिव है।

इस रंगमंच पर जीवन के नाटक (विष्णु–लीला) में अपनी भूमिका निभायें परन्तु समय–समय पर नेपथ्यशाला (ब्रह्म) में आते रहें, इसे भूलें नहीं और मेले के समापन पर उस स्थान को छोड़ देने (शिव) की समझदारी रखें।

यही है हठ–राज–लय योग का अद्वितीय संयोग एवं क्रियायोग का सत्–चित्–आनन्द।

जय गुरू।